प्राकृतिक वातावरण के रंग में ही राजस्थान का सांस्कृतिक परिवेश भी डूबा हुआ है। राजस्थान की सभी परम्पराएं, रीति-रिवाज, तीज-त्योहार, खान-पान, पहनावा, बोली आदि यहां की प्रकृति और ऋतुओं से प्रभावित है। राजस्थानी पोशाक की पगड़ी या साफा जिसका वर्णन हमें फाग अर्थात् होली के पर्व पर गाये जाते वाले गीतों में भी मिलता है।

'म्हारी ए मंगेतर नखरे वाली, साफा वालो रे नवाब।

ग्रीष्म ऋतु में यही साफा राजस्थानियों के लिये हेलमेट का कार्य करता है। आवासीय और खान-पान की दृष्टि से फूस की छान और मिट्टी की दीवारों को गोबर से लीपा जाना, छाछ, राबड़ी और मट्ठा का प्रयोग करना ग्रीष्म की प्रचंड़ता को कम करने के उपाय राजस्थानियों के दैनिक जीवन का हिस्सा है। एक गीत में मरूधर की ग्रीष्म ऋतु में उपयोग में लिये जाने वाले काकड़ी-मतीरा का वर्णन कुछ इस तरह है –

'मरूधर रा पाखी मोर बोले पीहू-पीहू,
सोने सी झांझर भोर बोले पीहू-पीहू।
फोगलिया रो रायतो जी खिपोली रो साग,

कोई आव उनकी याद जी कोई आव उनकी याद।
मरुधर में निपजे जी काकड़ी-मतीरा, कोई आव उनकी याद।'

ग्रीष्म ऋतु अपने नाम के अनुसार ही गर्म व तपन से भरी होती है। इस ऋतु में सूर्य की गति उत्तरायण होती है जिससे गर्म हवाएं चलती हैं जिन्हें राजस्थान में 'लू' के नाम से जाना जाता है। यही 'लू' मनुष्य, पशु-पक्षी, सभी के लिये असहनीय होती है। एक किसान इन गर्म हवाओं और सूर्य की तपिश को अपने गीत में कुछ इस तरह पिरोता है –

'मत तपियों म्हारा सूरज राजा, घणी धरा पर अगनी जलै।
तपै तावड़ों ताती लूआं को, नरम डील म्हारो घणो बले।
हरियाली ना नजर परै –
कुणसी डाला पंछी बैठे, रुहां का जिनावर भूख मरै।''

सूर्य की तीक्ष्ण किरणों का प्रभाव जल-संसाधनों पर भी पड़ता है। एक तरफ प्रचण्ड गर्मी से जल स्तर कम हो जाता है तो दूसरी तरफ सूर्य में तेजी और प्रचण्डता अत्यधिक हो तो वर्षा भी अच्छी होती है। गर्मी के कारण ही अनाज परिपक्व होता है और खाने योग्य बनता है। इस मौसम में ही तरबूज, आम जैसे रसीले फल भी होते हैं। ग्रीष्म की उग्रता और भंयकरता हमें यह संदेश भी देती है कि हमें आवश्यकता पड़ने पर सूर्य की सी प्रचण्डता अपनाने में भी संकोच नहीं करना चाहिए। इसके अलावा ग्रीष्म ऋतु हमें कष्ट सहन करने की शक्ति भी प्रदान करती है। रहीमदास एक स्थान पर कह गये हैं कि –

'जैसी परी सो सहि रहे, कह रहीम यह देह।
धरती पर ही परत है, सीत घाम अरू मेह।'

वैशाख और ज्येष्ठ मास में तपकर विदीर्ण हुई भूमि पर सूर्य की तेजी पर आग्रह करती हुई युवती कहती है कि

'तावड़ा मंदो पड़ जा रे, सूरज बादल में बड जारे।
किरण बादल में छिप जारे।।'

इस प्रकार ऋतुएं प्रकृति का श्रृंगार है तो लोकगीत मनोरंजन के वाहक है। ग्रीष्म ऋतु अपने नाम के अनुसार गर्मी व तपन से भरी हुई मानी जाती है। पोखर व तालाब सूखने लगते हैं। 'खेत में ना जाऊं ढोला तावड़ो पड़े' जैसे गीत की पंक्तियों के माध्यम से नायिका तेज धूप में खेत में जाने से कतराने लगती है लेकिन ग्रीष्म ऋतु केवल ताप और बैचेनी ही नहीं लाती अपने साथ रसदार फलों की सौगात भी लेकर आती है।

'पिला दे गन्ने का जूस दुपहरिया में, ऐसा में कहूं शहरिया में।'

इस प्रकार लोकगीतों की धुन और उन पर थिरकते कदमताल ग्रीष्म ऋतु प्रचण्डता में भी आनन्द की अनुभूति कराकर हमें और अधिक ऊर्जस्वित बना देते हैं।